जैन चित्र कथा

प्रेय की भभूत

सम्पादकीय

जल में विहार करने वाले प्राणी प्रत्येक हल चल के साथ नये मार्ग की रचना करते हैं। लक्ष्य की ओर बढने वाला साधक संघर्ष को महत्व देता है, जीवन जितना कठोर होता है। व्यक्ति उतना ही ऊंचा उठ जाता है। जो संघर्ष से बचकर पूर्व निर्मित मार्ग पर ही चलने का प्रयास करता है। वह जीवन में कभी भी आगे नही बढ सकता। नदी सरोवर और गर्दो में पड़ा भूतल का जल संघर्ष करता है, सूर्य किरणों से संतप्त होता है, तो वह रवि रश्मियों के सहारे ऊपर उठ जाता है। सारी गंदगी और मेल नीचे रह जाते हैं। राजा हो या रंक ब्राहम्ण हो या शुद्र विद्वान हो या मूर्ख जो कठोर श्रम करता है, संघर्ष करता है और दुर्गम दुलंघ्य स्थान में भी मार्ग तैयार कर लेता है। वह उन्नति के गिरि शिखर पर चढ जाता है। जैन साहित्य में असंख्य पौराणिक कहानियां भरी पड़ी हैं। जिसमें सम्यग्चरित्र पर आधारित यह पौराणिक कहानी नयी शैली में लिखी गयी है। जन मानस दो प्रकार की विचार धाराओं में विभक्त है, कुछ लोग अध्यात्म और अहिंसा की चर्चा करते हैं। कुछ भौतिकवाद और हिंसा की। अहिंसक व्यक्ति का आचरण परम पवित्र होता है। वह अपनी इन्द्रियों का निग्रह करता है। अहिंसा द्वारा संयम का विकास होता है। यह भी एक संयम के विजय की कहानी है। वैभव शाली परिवार में पली, सर्वांग सुन्दरी नर्मदा की शादी भी अत्यन्त सम्पन्न घराने में की गयी, परन्तु भाग्य की विडम्बना वह एकान्त निर्जन वन प्रदेश में छोड़ दी गयी। चरित्र की दृढता से उसे फिर से अपने पीहर के चाचा श्री से मिलना हुआ। फिर दुर्भाग्य से पेशेवर महिलाओं के चंगुल में फंस गयी। किसी भी प्रलोभन में नही आई, अपना विवेक नही खोया। उसे जीवन के कड़वे मीठे सारे अनुभव हो गये। दृढ चरित्र और पुरुषार्थी व्यक्ति की ही अन्त में जीत होती है। जानने के लिए पढ़ें – प्रेय की भभूत

ब्रं. धर्मचन्द शास्त्री
अष्टापद तीर्थ जैन मंदिर

जैन चित्र कथा

सुनो सुनायें सत्य कथाऐं

आशीर्वाद	–	श्री अस्ति सागर जी महाराज
प्रकाशक	–	आचार्य धर्मश्रुत ग्रन्थमाला एवं भा. अनेकान्त विद्वत परिषद
निर्देशक	–	ब्रं. धर्मचंद शास्त्री
कृति	–	प्रेय की भभूत
सम्पादक	–	ब्रं. रेखा जैन एम. ए. अष्टापद तीर्थ
पुष्पनं.	–	58
शिल्पकार	–	बने सिंह राठौड़
प्राप्ति स्थान	–	1. अष्टापद तीर्थ जैन मन्दिर 2. जैन मन्दिर गुलाब वाटिका

© सर्वाधिकार सुरक्षित

अष्टापद तीर्थ जैन मन्दिर
विलासपुर चौक,
दिल्ली–जयपुर N.H. 8,
गुड़गाँव, हरियाणा
फोन : 09466776611
09312837240

मूल्य–25/– रुपये

प्रेय की भभूत

चित्र : बने सिंह मो. 9460634278

ऋषभदत्त की बड़ी बहन सुन्दरी का विवाह वर्द्धमान नगर के सेठ सहदेव के साथ हुआ था। सहदेव रूप गुण और कला का आगार था। पत्नी भी उसके मन के अनुरूप प्राप्त हुई थी। जब सहदेव की भार्या गर्भवती हुई तो उसे नर्मदा नदी की चंचल तरंगों में स्नान करने का दोहद उत्पन्न हुआ। वर्द्धमान नगर से नर्मदा नदी बहुत दूर थी, अतः भार्या ने सहदेव से अपने इस दोहद का जिक्र नहीं किया। दोहद पूर्ण न होने से वह शनैः शनैः कृश होने लगी। उसका मुख विवरण हो गया तथा उसके शरीर की स्थिति चिन्त्य हो गयी। सहदेव ने एक दिन प्रेमपूर्वक पत्नी से पूछा।

प्रिये! क्या कारण है, जिससे तुम्हारी इस प्रकार की स्थिति हो गई है। तुम प्रतिदिन दुर्बल होती जा रही हो, भोजन भी बंद हो गया है। यदि यही स्थिति कुछ दिनों तक रह जायेगी तो तुम्हारा जीवित रहना भी कठिन है। तुम अपने मन की बात मुझ से क्यों नहीं कहती, कौन-सा कारण है, जिससे तुम्हारी यह स्थिति होती जा रही है।

नाथ! मैं इस भय से अपने मन की बात नहीं कर रही हूँ कि आपके द्वारा मेरी असम्भव दोहद इच्छा पूर्ण हो सकेगी या नहीं? असम्भव बात को कहकर अपने हितैषियों को संकट में डालना उचित नहीं।

जो व्यक्ति अपनी और अपने परिवार की सीमाओं का विचार किये बिना काम करता है, व संकट में फंस जाता है और उसे पश्चाताप करना पड़ता है।

देवी! जल में विहार करने वाले प्राणी प्रत्येक हलचल के साथ नये मार्ग की रचना करते हैं। लक्ष्य की ओर बढ़ने वाला साधक संघर्ष को महत्त्व देता है, जीवन जितना कठोर होता है व्यक्ति उतना ही ऊँचा उठ जाता है। जो संघर्ष से बचकर पूर्व निर्मित मार्ग पर ही चलने का प्रयास करता है, वह जीवन में कभी भी आगे नहीं बढ़ सकता। नदी सरोवर और गड्ढों में पड़ा भूतल का जल संघर्ष करता है, सूर्य किरणों से संतप्त होता है, तो वह रवि रश्मियों के सहारे ऊपर उठ जाता है, सारी गंदगी और मैल नीचे रह जाते हैं।

राजा हो या रंक, ब्राह्मण हो शूद्र, विद्वान हो या मूर्ख जो कठोर श्रम करता है, संघर्ष करता है और दुर्गम दुलंघ्य स्थान में भी मार्ग तैयार कर लेता है, वह उन्नति के गिरि शिखर पर चढ़ जाता है। परिश्रम से संसार में कुछ भी असाध्य नहीं है। असम्भव और असाध्य शब्द कायरों के शब्दकोश में निवास करते हैं। अतः तुम अपने मन की इच्छा व्यक्त करो, मैं उसे अवश्य पूर्ण करूँगा।

स्वामिन्! मेरे मन में नर्मदा की चंचल लहरों में निरंतर स्नान करने की भावना उत्पन्न हुई है। इस दोहद के पूर्ण न होने से मेरा शरीर क्षीण हो रहा है तथा शरीर के साथ मेरी अन्य शक्तियाँ भी लुप्त होने लगी है।

यद्यपि मैं यह समझती हूँ कि व्यक्तित्व शुद्धि की दृष्टि से इस स्नान का कुछ भी महत्व नहीं है, तो यह दोहद इच्छा मेरे परम्परा गत विश्वासों का समर्थन कर रही है। जीवन का अर्थ है शरीर और आत्मा का सम्बन्ध। जहाँ शरीर आत्मा के लिए होता है, आध्यात्मिक विकास में सहयोग प्रदान करता है, वहाँ जीवन प्राणवान बन जाता है। इसके विपरीत जहाँ शरीर अपने आप में साध्य बन जाता है, आत्मा के विकास की उपेक्षा की जाती है। वहाँ चेतन के स्थान पर जड़ की पूजा आरम्भ हो जाती है। यानि कि जीवन के स्थान पर मृत्यु की पूजा होने लगती है। अतः क्रियाशीलता और विवेक को अपनाये रखना ही कार्य सिद्धि का मूलमंत्र है।

पत्नी के दोहद को पूर्ण करने के लिए सहदेव ने अपने निजी सहित प्रस्थान किया। उसने प्रसन्नतापूर्वक जलयानों की व्यवस्था की और नाना प्रकार के वैभव सहित नर्मदा के लिए चल दिया। वह अपने साथियों सहित जिस नगर में पहुँचता, वहीं अत्यन्त अभ्युदय पूर्वक भगवान की पूजा करता। चैत्यालयों के जीर्णोद्धार की व्यवस्था करता और चतुर्विध संघ को समृद्ध बनाता। इस प्रकार सुखपूर्वक चलता हुआ वह नाना वन और अमराईयों से सुशोभित रेवा नदी के निकट पहुँचा।

सुन्दरी इस स्थान के दर्शन कर बहुत प्रसन्न हुई। उसका आत्म विश्वास बढ़ गया। जीवन के रेगिस्तान में पुनः जलधारा का दर्शन हुआ। नर्मदा के तट पर पहुँच कर उसका हृदय शीतलता से भर गया। आँखों के सामने स्वच्छ नीला शीतल जल छलकने और लहराने लगा। मर्मव्यथा के पर्दे हटने लगे, दक्षिण पवन देश-विदेश के पुष्पों का गंध उड़ा लाया था। न जाने कैसी गंध सुन्दरी के मन को विभोर कर रही थी। उदित होते हुए सूर्य की रश्मियाँ नर्मदा की तरंगों के साथ क्रीड़ा कर रही थी। चारों ओर सौन्दर्य के भवर उठ रहे थे। दृष्टि ठहर नहीं पाती। सम्मोहन के इस लोक में समस्त रागिणियाँ बज उसके मानस संगीत में मुर्छित होती जाती थी। सुन्दरी का मन न मालूम किन कल्पना लहरों के साथ उलझ रहा था। उसके कुन्दोज्ज्वल देह पर तेज पराक्रम उभरता जा रहा था। उसकी सम्पूर्ण इंद्रियाँ प्राण की उसी एक ऊर्जस्वल धारा में विलीन हो गयी थी।

प्रातः काल प्रसन्नता से भरकर नाना प्रकार के सुंदर वस्त्राभूषणों से सज्जित हो सुन्दरी अपने पति सहदेव और उसके साथियों के साथ नज्जन क्रीड़ा एवं विनोद करने के लिए महानदी रेवा के तट पर पहुँची वहाँ नदी के गंभीर लहरों को देखकर उसका मन शान्त हो गया, उसकी वह शान्ति उपलब्धिजन्य नहीं तृप्ति जन्य थी। प्रतिदिन स्नान करते हुए एक महीना पोषके लघु कायदिन के समान सहज ही निकल गया। सुन्दरी के तन-मन दोनों स्वस्थ है। उसे अपार तृप्ति का अनुभव हुआ है। कषाय के उद्वेग और दैहिक स्फूर्ति के साधनों ने उसे कृतार्थ बना दिया है।

स्थान की रमणीयता ने सहदेव को आकृष्ट किया। यहाँ के कण-कण ने उसके मन और अन्तरात्मा को संतुष्ट कर दिया। इस तट पर नाना देशों के व्यापारी भी पधारे, जिससे क्रय-विक्रय का सुअवसर प्राप्त हुआ। इस समय सहदेव को अपने माल में बहुत लाभ हुआ। यह सत्य है कि जब अनुकूल समय आता है तब सभी विभूतियाँ स्वमेव प्राप्त हो जाती है। भाग्य के प्रतिकूल रहने पर संचित भी नष्ट हो जाता है। सहदेव का शुभोदय विभूति प्राप्ति का कारण बना हुआ है। अतः अप्रत्युत वैभव प्राप्त कर उसका मन वहीं पर बस जाने का करने लगा। उसने अपने साथियों के समक्ष प्रस्ताव रखा-

यह स्थान मुझे सुन्दर प्रतीत होने के साथ शुभ मालूम पड़ता है। यहाँ आते ही मेरा वह सामान बिक गया जो वर्षों से सड़ रहा था। जिसकी रकम डूब चुकी थी, वह वसूल हो गयी है। अतएव मेरा विचार है कि यहाँ एक नगर बसाकर हम लोग रहने लगें।

श्रेष्ठिवर्य! आपका विचार सुन्दर है, मैं भी आपके इस प्रस्ताव का अनुमोदन करता हूँ। आप यहाँ एक नगर बसाइये तथा इस नगर को एक प्रमुख व्यावसायिक नगर बना दीजिये। यहाँ यातायात की सभी सुविधाएँ वर्तमान है। जलपोतों के साथ-साथ स्थलमार्ग से भी सामान लाने में कठिनाई प्रतीत नहीं होगी। यह भूमि भी पर्याप्त लम्बी चौड़ी पड़ी हुई है। पशुओं के लिए चारागाहों की भी यहाँ कमी नहीं है। जल प्राप्ति की पूरी सुविधा है। अतः व्यावसायिक दृष्टि से यह स्थान नगर बसाने के सर्वथा उपयुक्त है।

सहदेव ने नर्मदपुर नाम का नगर बसाने के लिए नाना देशों और नगरों से व्यापारियों को बुलाया। उसने अनेक प्रकार के कर्मकर, सामन्त सैनिक, शिल्पी आदि को वहाँ बुला लिया। नर्मदपुर सभी दृष्टियों से अच्छा नगर बन गया। यहाँ सभी वस्तुएँ प्राप्त हो जाती थी। न तो नगरवासियों को किसी प्रकार का कष्ट था और न व्यापारियों को ही। व्यापारी दिनोंदिन समृद्ध होते जा रहे थे। खेती भी अच्छे रूप में उत्पन्न होने लगी थी और पशु सम्पत्ति भी समृद्ध होने लगी थी। सबसे बड़ी घटना यह घटित हुई कि नर्मदपुर की पश्चिम दिशा में एक स्वर्ण की खान निकल आई, जिससे व्यवसाय में पर्याप्त उन्नति होने लगी। श्रमिकों को कार्य मिलने लगा और आर्थिक दृष्टि से सभी सुख का अनुभव करने लगे।
सुन्दरी का गर्भ पुष्ट होने लगा। उसकी मातृ साधना सफलता की ओर बढ़ने लगी। सहदेव व्यापारी और श्रमिक वर्ग का नेता बन गया। वह पुरुषार्थ, शौर्य-वीर्य, विद्या-बुद्धि एवं बल के सहारे सर्वहारा वर्ग का भी अग्रणी हो गया। थोड़े ही समय में उसे अनेक उपलब्धियाँ प्राप्त हो गयीं। उसे भावी सन्तान का अभ्युदय दिखलाई पड़ रहा था। पहली बार उसकी पिता बनने की महत्त्वकांक्षा पूर्ण होने जा रही थी, वह सोचता।
अब मेरी गोद में धरा का वह सौन्दर्य बिखरेगा, जिसके लिए स्वर्ग के देवता भी लालायित हैं। उस दिन सचमुच उन्हें मुझसे ईर्ष्या होगी, जिस दिन सुन्दरी के उदर से आलोक पुन्ज का अविर्भाव होगा।
समुद्र के भीतर जैसे उत्ताल तरंगों का मंथन होता है, वैसे ही उसके हृदय में अनेक भावनाओं की तरंगे उठ रही थी। वह दिन भी आ पहुँचा। आज सुन्दरी और सहदेव की चिराकांक्षित अभिलाषा पूर्ण हुई। भवन में एक कन्या के रूदन की ध्वनि सुनायी पड़ी। कन्या बहुत ही सुन्दर रूप लावण्य में अद्वितीय थी और उसके शरीर से तेज निकल रहा था। ज्योतिषियों को बुलाया गया, कन्या के ग्रह नक्षत्र दिखलाये गये। ज्योतिषियों ने पत्र खोला, जन्मपत्री बनाई और कहा।
कन्या बहुत ही भाग्यशालिनी है। इसके जन्म से माता-पिता का अभ्युदय होगा।
नर्मदा का दोहद होने के कारण कन्या का नाम भी 'नर्मदा' रखा गया, नर्मदा की चंचल तरंगों के समान उसकी चुलबुलाहट सभी का मन आकृष्ट करती थी। सहदेव और सुन्दरी ने कन्या को लक्ष्मी समझा और उसका लालन-पालन ही पुत्र के समान किया। कन्या के गर्भ में आते ही धन सम्पत्ति की वृद्धि हुई थी। अतएव माता-पिता बहुत प्रसन्न थे।

पाँच वर्ष की अवस्था होते ही कन्या का विद्यारम्भ संस्कार सम्पन्न किया गया। प्रतिभा शालिनी बालिका अध्ययन में विशेषरुचि लेती थी। नर्मदा के अध्यापिका–अध्यापक उसकी प्रशंसा करते हुए एक विलक्षण बुद्धि मती मानते थे। सुवर्ण के समान उसका स्वरूप सौन्दर्य था और सरस्वती के तुल्य बुद्धि।

नर्मदा सुंदरी जब वयस्क हुई तो उसके रूप सौन्दर्य कायश सुनकर अनेक श्रेष्ठि पुत्र आने लगे। सहदेव ने निश्चय किया कि–

कन्या का विवाह समान धर्मी के साथ ही होना चाहिए। क्षणभंगुर सुख के लिए धर्म बेचना ठीक नहीं। जो माता–पिता अपनी कन्या का विवाह किसी प्रलोभन वश असमानधर्मी के साथ कर देते हैं। वे धर्म के रहस्य से अनभिज्ञ हैं। जन मानस दो प्रकार की विचार धाराओं में विभक्त है। कुछ लोग अध्यात्म और अहिंसा की चर्चा करते हैं और कुछ भौतिकवाद और हिंसा की। अहिंसक व्यक्ति का आचरण परम पवित्र होता है, वह अपनी इन्द्रियों का निग्रह करता है। अहिंसा द्वारा संयम के जीवन का विकास होता है और हिंसा के द्वारा भोगवाद का।

भोगप–भोग की प्रचुर सामग्री और सुविधा प्राप्त करने के लिए व्यक्ति संग्रह और शोषण की ओर बढ़ता है, साथ ही जहाँ भोग वासना को जीवन का लक्ष्य मान लिया जाता है, वहाँ व्यक्ति सदाचार, सचाई और ईमानदारी का उलंघन करते समय जरा भी नहीं हिचकिचाता। क्योंकि उसका मन वास्तविकता, सदाचार आदि सद्गुणों में नहीं लगता। उसे वास्तविकता विषय वासना में मिलती है। यह मानव का बहुत बड़ा चैचारिक पतन है। बुराईयों की ओर बिन रूके लुढ़कने की यह वह फिसलन है जो व्यक्ति को अवनति के रसातल तक ले जाये बिना नहीं छोड़ती। व्यक्ति का भोगवाद और सुविधावाद में फँसना ही हिंसक विचार है। विषय वासना और भोग लोलुपता ऐसी दुष्प्रवृत्तियाँ हैं जिनका निकाल फेंकना व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। जो सुख अहिंसा, सत्य, शील, सदाचार जैसे गुणों की प्राप्ति में है, वह भोग और वासना में कदापि नहीं। हिंसा में जितनी बुरी प्रवृत्तियाँ हैं, सभी सम्मिलित हैं–राग–द्वेष और स्वार्थमयी प्रवृत्तियाँ हिंसा हैं। वह सूक्ष्म हो या स्थूल, टालने योग्य हों या अनिवार्य, आवश्यक हो या अनावश्यक, समाज राजतंत्र और अर्थ नीति से सम्मत हो या असम्मत, हिंसा है।

समाजशास्त्र में हिंसा के दो रूप बन जाते हैं, नैतिक और अनैतिक आवश्यक हिंसा–विरोध और उद्योग जनित समाज में अपरिहार्य है इसे समाज शास्त्रियों ने नैतिक रूप दिया है। अनैतिक हिंसा समाज के लिए अभिशाप है, यह समाज को विशृंखलित करती है। वास्तविक दृष्टि से किसी प्रकार भी हिंसा नैतिक नहीं हो सकती। जीवन का लक्ष्य यह होना चाहिए कि स्वार्थमयी प्रवृत्ति कम से कम हो। व्यक्ति जीवन में उन प्रवृत्तियों को अपनाये, जिन प्रवृत्तियों में स्वार्थ साधन की भावना स्वल्प रहती है।

सहदेव की विचारधारा और आगे की ओर बढ़ी और वह गम्भीर विचारों में निमग्न होते हुआ सोचने लगा–

कन्या का विवाह समान धर्मी के साथ करने में सबसे बड़ा हेतु सांस्कृतिक उत्थान का है। असमान धर्मियों के बीच स्थायी प्रेम नहीं हो सकता। दोनों में निरन्तर कलह होता रहता है। आजकल लोग भौतिकता को महत्त्व देते हैं, जिसका परिणाम अशान्ति, संघर्ष और दिन–रात कष्ट उठाना है। जीवन को केवल भौतिक साधनों का कारण मानना पतन है। धनलिप्सा में अंधा व्यक्ति येनकेन प्रकारेण वैभव का अम्बार खड़ा करने में जुटा रहता है।

इस अत्यधिक आसक्ति ने इसके विवेक में कुण्ठा पैदा कर दी है। सत्–असत् नापने में उसे अर्थ के अतिरिक्त अन्य मापदण्ड नहीं दिखता। पूँजीवादी मनोवृत्ति जहाँ एक ओर मानव के वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन का विघटन करती है, वहाँ दूसरी ओर भाई–भाई को खून का प्यासा भी बना देती है। पिता–पुत्र के बीच वैमनस्य और रोष की भयावह दरार पैदा हो जाती है। यह जीवन कोई वास्तविक जीवन नहीं, जहाँ व्यक्ति अर्थ कीट बन दिन रात अर्थ से चिपटा रहता है। जीवनोत्थान के लिए समानधर्मी साथी का मिलना अत्यावश्यक है।

सहदेव के पास महेश्वर ने आकर प्रार्थना की कि

मेरे साथ नर्मदा सुंदरी का विवाह कर दिया जाय।

महेश्वर हिंसा को हितकर समझता और नर्मदा अहिंसा को। यद्यपि दोनों की जाति एक थी, पेशा भी एक था और रहन सहन भी प्रायः एक समान थे। सहदेव ने पहले ही धारणा बना ली थी कि विवाह समान जाति, वर्ण और गुण वालों के समान होना चाहिए। असमानता सर्वदा कष्टप्रद होती है। पति-पत्नि का जीवन समत्व में ही विकास को प्राप्त करता है। अतएव उसने महेश्वर के साथ नर्मदा का विवाह करने से इनकार कर दिया। उसने स्पष्ट रूप से कह दिया कि–

समत्व के बिना विवाह सम्भव नहीं है। पति-पत्नि की भिन्न विचारधारा होने से उन दोनों में कलह की सम्भावना बनी रहेगी। जीवन के दो आदर्श होने पर दम्पत्ति के जीवन का विकास सम्भव नहीं है।

सहदेव के इस उत्तर को सुनकर महेश्वर अवाक रह गया। उसे अपने वैभव रूप लावण्य और सम्मान का अहंकार था। वह समझता था कि कोई भी व्यक्ति मुझे अपनी कन्या देने में सौभाग्य समझेगा। आचार की विभिन्नता बाधक होगी यह तो उसने कभी सोचा भी नहीं था। महेश्वर को यह अपना अपमान प्रतीत हुआ। वह इस समय सार्थवाहों का प्रधान था। शिखर व्यापार के लिए वह जाता उसके साथ सैकड़ों सार्थवाह चलते व्यवसायी होने के साथ वह शूरवीर भी था। उस जैसा कुशल धनुष बाणधारी और खड्ग चलाने में प्रवीण दूसरा व्यक्ति नहीं था।

नर्मदा का सौन्दर्य उसके मन को बारबार आकृष्ट कर रहा था।

वह सुंदरी इस भूतल का बन्चमा है। ऐसा सुन्दर पुष्प किस सरोवर में विकसित हुआ है, यह अनुमान गम्य नहीं है। उसका सौन्दर्य प्रवाह देश और काल की सीमाओं के ऊपर होकर है। और रूप, वह तो अपने आप में सीमा है। उसकी मधुर वाणी तो अमृत के समान है। ऐसी सुन्दरी के साथ विवाह किये बिना जीवन निस्सार है, मेरी योग्यता को धिक्कार है, वैभव को धिक्कार है, इस रमणी के बिना जीवन व्यर्थ है।

आज महेश्वर विशेष उदास है। किसी कार्य में उसका मन नहीं लग रहा है। संध्या हो गयी है, चन्दमा की ज्योत्स्ना चारों ओर बिकीर्ण है। भूमण्डल रजतमय हो गया है। नर्मदा के विशाल जल विस्तार पर हंस युगलों का विरल क्रीड़ा रव रह रह कर सुनाई पड़ता है। देवदारु वन और रजनीगंधा का सुगंधी लेकर वासन्ती वायुमय वातावरण ने महेश्वर की विकलता को बढ़ा दिया है। भीतर से पवन जितना ही अधिक तरल, कोमल और चंचल हो रहा था, बाहर से उतना ही अधिक कठोर स्थिर और विमुख दिखलाई पड़ रहा था।

इस रमणी को प्राप्त करने के लिए मुझे सर्वस्व त्याग करना पड़े, तो भी कोई बात नहीं। मैं अपना धन–वैभव छोड़ सकता हूँ। अपनी परम्पराओं से आगत प्यारी आराधना को छोड़ सकता हूँ। यदि मैं इस रमणी को प्राप्त करने के लिए अपनी परम्परागत हिंसा को छोड़ने का अभिनय कर सकूं तो मेरा विवाह अवश्य इस रमणी से हो सकता है। मैं उस रमणी को किसी भी मूल्य पर प्राप्त करने को तैयार हूँ।

यह सोच कर उसने अपने मन में एक विचार स्थिर किया और अगले दिन सहदेव को अपने कपट व्यवहार द्वारा प्रसन्न कर नर्मदा के साथ विवाह करने की स्वीकृति प्राप्त कर ली।

विवाह की तैयारियाँ की जा रही है। प्रातः काल सानाराग, गंध और उबटनों से उसे सज्जित किया गया है। विभिन्न प्रकार के कमल परागों से अंगराग किया गया है। विभिन्न वाटिकाओं और उपवनों से पुष्पावचय कराया गया है। मंगल वाद्यों से सारा नर्मदपुर मुखरित है। तोरण द्वार गोपुर, मण्डप और वेदियों से तटभूमि रमणीय हो उठी है स्थान–स्थान पर बालाएं अक्षत, कुंकुम मुक्ता और हरिद्रा से चौकपुर रही है। बारांगनाएं मंगलगीत गाती हुई उत्सव के आयोजन में संलग्न है। कहीं पूजा विधान चल रहे हैं उससे सारा वातावरण आनंद मंगल से युक्त है।

नैसर्गिक सुन्दरी नर्मदा आज अलंकृत होने से अनुपम प्रतीत होती है। उसके ललाट, वक्षस्थल और भुजाओं पर मनोयोगपूर्वक पत्रलेखाएं लिखी गयी है। अनेक हारों आभूषणों और कण्ठिकाओं से उसे सजाया गया है। स्वर्ग की अप्सराएं उसके सामने नत है। इतना सौन्दर्य शायद ही एक स्थान पर देखा गया हो। महेश्वर को भी शोभित किया गया है। उसके शरीर का संस्कार भी अनेक प्रकार के सुगन्धित पदार्थों द्वारा सम्पन्न हुआ है। दिव्य वस्त्रा भूषण के साथ उसका सौंदर्य अनुपम प्रतीत हो रहा है। जो महेश्वर को देखता है, वह उसे एकटक दृष्टि से देखता रह जाता है। परिणय की वेला आ पहुँची। पंडितों और पुरोहितों ने मंत्रोचारण आरम्भ किये। हवन के सुगन्धित धूप से दिशाएं व्याप्त हो गई। विभिन्न वाद्यों की स्वरलहरियाँ, रमणियों के मृदुमन्द कंठों से मिलकर अपूर्वस्वर उत्पन्न कर रही थी। नर्मदा की शीतल मृदुल हाथ महेश्वर के हाथ से जोड़ दिया गया। इस पाणिग्रहण के अवसर पर चारों ओर से मंगल और आशीर्वचनों की ध्वनि सुनाई पड़ने लगी। दिशाएं मंगल कामनाओं से व्याप्त हो गयी। आज दो आत्माएं एकाकार होने जा रही है। दोनों को हर्ष विषाद सदा के लिये एक रूप में परिणत हो रहा है।

पिता सहदेव ने दानमान और सम्मान से आगत बारातियों का स्वागत सत्कार किया। अपने आतिथ्य द्वारा सबको संतुष्ट कर दिया। दहेज में प्रचुर धन दिया और नाना प्रकार के वस्त्राभूषण समर्पित किये। कुटुम्बजन, पुरोहित, सार्थवाह, सामन्त, नेता आदि सभी इस संयोग की प्रशंसा कर रहे थे। उनके मुख से आशीष ध्वनि निकल रही थी कि–
जिस प्रकार चन्द्रिका सर्वदा चन्द्रमा के साथ निवास करती है, उसी प्रकार यह नर्मदा सुंदरी महेश्वर के साथ सुशोभित हो।
माता–पिता ने पुत्री को अनेक प्रकार की शिक्षा दी और समझाया–
बेटी! अब तुम्हारा घर महेश्वर का है। कन्या वही उत्तम मानी जाती है, जो अपने पितृकुल का नाम उज्ज्वल करे। तुम सर्वदा सास–ससुर आदि गुरुजनों की सेवा करना, पति की आज्ञा के अनुरूप चलना और समस्त परिजनों को संतुष्ट रखने का प्रयास करना।
नर्मदा सुन्दरी ने सिर झुकाकर गुरुजनों की शिक्षा स्वीकार की। मंगला चार के पश्चात् बारात को विदा किया गया।
कई दिनों तक चलने के पश्चात् वे दम्पति वर्द्धमानपुर में आये। महेश्वर की माता ऋषिदत्ता ने अपने भवन को सज्जित कराया। तोरण बंधवाये, वंदनमालाएं लटकाई गई और मंगल तूर्य बजाये जा रहे थे और वधु के स्वागत का पूरा प्रबन्ध किया गया था। आज ऋषिदत्ता बहुत प्रसन्न थी उसकी अन्तरात्मा तृप्त हो गयी थी। वह रति तुल्य सुन्दरी वधू को प्राप्त कर कृतार्थ थी। अब उसे अपना जीवन सार्थक प्रतीत हो रहा था। उस भवन में रणितनुपरों की ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। नर्मदा सुन्दरी इस नये परिवार में आकर अन्य कुल वधुओं के समान कार्य संलग्न थी। पति–पत्नि में धार्मिक–दार्शनिक विचारधाराओं को लेकर वाद–विवाद हो जाता था। एक दिन महेश्वर ने कहा–
सुन्दरी! तुम अपने श्रमण–धर्म की प्रशंसा करती रहती हो। बताओ हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, और परिग्रह–संचय का त्याग करने से क्या व्यापार चलेगा? व्यापार करने के लिए उक्त सभी पाप करने पड़ते है। धनार्जन करना कोई सामान्य बात नहीं है। इस के लिए छल प्रपंच करना आवश्यक है जो धर्मात्मा बनना चाहता है, उसे चाहिए कि वह व्यवसाय त्याग कर वन में जाकर तपश्चरण करने लगे।

जीव दया पालने और सत्य व्यवहार करने से क्या दैनिक जीवन के कार्य सुचारू रूप से चल सकते हैं। जीवन को व्यवहारिक होना चाहिए। जिसके पास शक्ति है वह कायरता का आचरण नहीं करता। यह तो पागलों की रीति नीति है कि वे जीव दया और ब्रह्मचर्य की बातें कह कर लोगों को बहकाते हैं। जीवन के यथार्थवादी दृष्टिकोण से पृथक करते हैं, मेरी दृष्टि में जीवन का सत्य स्वेच्छया भोग भोगना और उपलब्ध पदार्थों का यथोचित उपयोग करना है। जो वीतरागी देव हैं, वह न तो किसी से प्रसन्न होगा और न किसी से असंतुष्ट। जो उसकी सेवा करेगा वह कुछ प्राप्त नहीं कर सकता है और जो इस देव की निन्दा करेगा, उसे कोई दण्ड नहीं मिल सकता है। इस स्थिति में वीतरागी देव की उपासना हमारे किस काम की है।

नाथ, आपने अभी जीवन के यथार्थ लक्ष्य को नहीं समझा। जीवन का लक्ष्य शाश्वत् सुख शान्ति के लिए प्रयत्न करना है। हमारा इतना ही लक्ष्य नहीं है कि सांसारिक भोग भोगते हुए जीवन को समाप्त कर दें। मानव जीवनका लक्ष्य आत्मोत्थान या आत्मोद्धार है। इस लक्ष्य के अनुसार ही हमें सांसरिक कार्यों में प्रवृत्ति करनी चाहिए।

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह संचय रूप पापों के सेवन से कोई सुखी नहीं हो सकता। यदि इन पापों का सेवन ही धन संचय का कारण होता तो चोर लुटेरे भी धनिक बन गये होते। धन संचय का कारण शुभोदय है। जिस व्यक्ति के शुभकर्म का उदय है, उसे अनुकूल सामग्री की प्राप्ति होती है और अशुभोदय आने पर अनुकूल सामग्री नष्ट हो जाती है और प्रतिकूल कारण कलाप एकत्र हो जाते हैं।

पाप कभी सुख का कारण नहीं बन सकते। इनके सेवन से अन्तरात्मा कलुषित हो जाती है और व्यक्ति अपने निजस्वरूप को भूले रहता है। यह मोहादेव का परिणाम है कि आपके मुख से इस प्रकार की बातें निकल रही है। सात्विक प्रवृत्ति को प्रत्येक समझदार व्यक्ति सुखप्रद मानता है। जो पाप का सेवन करता है, उसी को राजदण्ड समाजदण्ड और जातिदण्ड प्राप्त होते हैं।

जो आपने वीतरागी देव की उपासना के सम्बन्ध में तर्क उपस्थित किया है, वह निरर्थक है। वीतरागी किसी को कुछ देता लेता नहीं, पर उनकी भक्ति करने वाला अपनी भावना के तारतम्य के अनुसार स्वयं ही शुभाशुभ फल प्राप्त कर लेता है। कर्त्ता–भोक्ता स्वयं यह आत्मा है, यह जिस प्रकार के कर्म करता है, वैसा ही आस्रव होता है और तदनुसार बन्ध। एक अन्य बात यह भी है कि भक्ति करने का उद्देश्य कुछ प्राप्त करना नहीं है, इसका लक्ष्य तो आत्मशुद्धि की प्रेरणा प्राप्त करता है। हम जिस प्रकार के देवकी भक्ति करेंगे। उसी प्रकार की हमारी परिणति हो जायेगी। वीतरागता ही मुक्ति का साधन है और इसी वीतरागता को प्राप्त करना हमारा उद्देश्य है। कषाय को घटाने या कषाय को क्षीण करने पर ही वीतरागता प्राप्त होती है। अतः वीतरागी की भक्ति ही उपादेय है।

इस प्रकार नर्मदा सुंदरी से जीवानोत्थान की बातें सुनकर श्वसुर गृह के सभी व्यक्ति संतुष्ट हुए और उसका कुलवधु की तरह सम्मान करने लगे।

एक दिन नर्मदा सुंदरी अपने भवन की तीसरी मंजिल पर बैठी हुई पान चबा रही थी। उसने पान की पीक को नीचे के चौराहे पर थूका। पानकी यह पीक एक ईर्यासमिति से गमन करते हुए साधु के ऊपर पड़ गई। साधु का शरीर दूषित हो गया और उसे क्रोध आ गया उसने अभिशाप दिया कि.....

जिसने मेरे ऊपर यह गंदी वस्तु गिरायी है वही इसी जन्म में नाना प्रकार की विपत्तियों को प्राप्त होगा।

जब साधु की यह आवाज नर्मदा सुंदरी ने सुनी तो वह तत्काल प्रासुक जल लेकर नीचे आई और साधु का शरीर स्वच्छ किया। उनके चरणों में गिरकर प्रार्थना की–

वीतरागी प्रभो! मेरे अपराध को क्षमा कीजिए। मैंने आपका अपमान करने की दृष्टि से पान का रस नहीं गिराया था। यह मेरी अज्ञानता के कारण आपके ऊपर पड़ गया, अतः आप क्षमा कीजिए।

वत्से! क्षमा करने की कोई बात नहीं। पता नहीं मेरे मन में क्रोध क्यों आ गया। मैं स्वयं पश्चाताप कर रहा हूँ। यह भी मेरे किसी कर्म का उदय था, जो इस रूप में परिणत हुआ। वचन अन्यथा नहीं हो सकते, दिया गया अभिशाप अब मृषा नहीं हो सकता। उसका एक ही उपाय है कि जन कल्याण किया जाय। जनकल्याण के कार्यों के करने से अशुभ कर्मों की निर्जरा होती है और आत्मा पवित्र हो जाती है।
साधु चला गया और नर्मदा अपने अशुभ कर्मों की निर्जरा के लिए दान, पूजा, शील और तपाराधना में प्रवृत्त हुई। रोगियों, दुखियों और असहायों की सेवा में लग गयी। उसने चैत्यालयों में पूजन की व्यवस्था कराई। मुनियों और तपस्वियों को आहार दान दिया। राहगीरों के लिए प्याऊ, शालाओं का प्रबन्ध किया। तन, मन और धन से उसने लोक सेवा का व्रत ग्रहण किया। वह वीतरागी देवों के उपासना में अपना अधिकाधिक समय व्यतीत करने लगी। भक्ति ही सुख और शान्ति देने वाली है। साधारण मानव भी प्रभुभक्ति के प्रभाव से अपना कल्याण कर सकता है। वीतरागी प्रभु की सेवा भक्ति से परम शान्ति की प्राप्ति होती है।
महेश्वर दत्त उद्यान में क्रीड़ा कर रहा था। आज उसके अन्तर में कोई चिन्ता समाहित है। वह स्वयं ही नहीं समझ पाता है कि क्यों रह रहकर मन उदास हो रहा है। कार्य करने में चित्त क्यों नहीं लगता है। वह नर्मदा के साथ कंदुक क्रीड़ा कर रहा था, पर बीच–बीच में ध्यान अन्यत्र चला जाता था। जिससे उसका शान्त मन अशान्त हो जाता। नर्मदा ने विनीत भाव से पूछा–
स्वामिन! क्या कारण है कि आप का मन आज कन्दुक क्रीड़ा में नहीं लग रहा है। कौनसी आपको चिन्ता है जिससे रह–रह कर आप चौंक जाते हैं। कृपया मुझसे अपनी कोई बात छिपाईये नहीं स्पष्ट कह दीजिये। शायद मैं आपकी सहायता कर सकूं।
जो अपने पितामह–पिता द्वारा अर्जित सम्पत्ति का उपयोग करता रहता है, वह तो निष्फल जीवन है ही, पर जो निरन्तर विषयासक्त हो घर पर ही रहता है, वह भी कूप मण्डूक बन जाता है। व्यापार में निरन्तर गतिशील रहना ही जीवन की यथार्थता है। जिस झरने का जल सतत् प्रवाहित होता रहता है, उसी का जल स्वच्छ और पेय माना जाता है। जीवन की भी यही स्थिति है, गतिशीलता के कारण जीवन क्रियाशील है और निष्क्रियता के कारण जड़।

उसने व्यापार हेतु यवन द्वीप चलने की तैयारी कर दी। अन्य सार्थवाहों को भी साथ चलने की आज्ञा दे दी गयी। सभी के यान तैयार होने लगे। विभिन्न प्रकार का सामान यानों में भरा जाने लगा। जिस-जिस प्रकार के सामान की बिक्री यवनद्वीप में हो सकती थी। उस-उस प्रकार का सामान एकत्र किया गया। जब सभी प्रकार की तैयारियाँ समाप्त हो चुकी और गमन करने की तिथि निकट आई तो नर्मदा ने अपने पति महेश्वर दत्त से प्रार्थना की—

नाथ! पति के वियोग में पत्नी का कुशलता पूर्वक रह सकना बहुत कठिन है। आप यवन द्वीप को जा रहे हैं, मैं आपके बिना एक क्षण भी नहीं रह सकती हूँ। अतएव आप मुझे अपने साथ ले चलने की अनुमति दीजिए। मैं आपकी सब प्रकार से सेवा करूंगी। समय-समय आपको उचित परामर्श भी दूँगी।

प्रिये! तुम परदेश के कष्टों से अपरिचित हो, इसी कारण साथ चलने का आग्रह कर रही हो। परदेश में नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। वहाँ की भाषा न जानने से तो न मालूम कितने प्रकार की कठिनाइयाँ उठानी पड़ती है। मैं अकेला तो किसी प्रकार सह लूँगा, पर तुम्हारी जैसी सुन्दरी को साथ लेकर चलना उचित नहीं है। मार्ग में चोर-डाकू मिलते हैं जिनका धनुर्बाण से सामना करना होता है।

प्रभो! आप के साथ चलने से मुझे आनन्द के अतिरिक्त कुछ भी कष्ट नहीं होगा।

सुन्दरी! तुम यहीं रहकर सास, ससुर और परिजनों की सेवा कर अपने कर्त्तव्य का पालन करो।

नाथ! मैं आपके वियोग में प्राण धारण करने में असमर्थ हूँ। मछली जल से अलग होने पर जीवित रह सकती है पर मैं आपके बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकती हूँ। यह आप निश्चय समझ लीजिए कि, यहाँ से आपके जाने के पश्चात् मेरे प्राण भी आपके साथ चलेंगे। शरीर का चलना तो मेरे हाथ में नहीं है, पर प्राणों का चलना तो मेरी इच्छा के अधीन है। आप जानते हैं कि नारी के लिए पति ही गति है, पति ही शरण है और पति ही सर्वस्व है। पति के अभाव में नाना प्रकार की विपत्तियों का सामना करना पड़ता है।

सुन्दरी! समुद्र अत्यन्त भीषण है। इसमें चलने पर यान सकुशल पहुँच सकेगा कि नहीं, यह आशंका की बात है। अतः तुम्हारा साथ चलना किसी प्रकार उपयुक्त नहीं है। साथ चलने के दुराग्रह को छोड़ दो, हठ करने से किसे कष्ट नहीं उठाना पड़ता।

महेश्वरदत्त के उक्त कथन को सुनते ही नर्मदा रोने लगी। 'नारीणां रोदनं बलम्' प्रसिद्ध है। जब अनुरोध और प्रार्थना से कार्य नहीं हो सकता है, तो रो धोकर ही अपना कार्य कराती है। महेश्वर से नर्मदा का रोना नहीं देखा गया। नर्मदा के आंसुओं ने उसके हृदय को पिघला दिया और उसे कहना पड़ा—

चलो साथ, जो सुख दुःख होगा, साथ–साथ भोगा जायेगा। तुम्हारे स्नेह को ठुकरा कर जाना साधारण बात नहीं है।

अधिक समय के लिए भोजन–पान की व्यवस्था कर ली गयी। यान को लंगरों से वेष्टित कर दिया गया। जलयान के लंगर खोल दिये। पाल तान दिये और जलयान समुद्र की लहरों के साथ क्रीड़ा करने लगा। यान की गति तेजी से बढ़ रही थी और नाना प्रकार के मगरमच्छ और घड़ियालों के साथ उसका संघर्ष होता जा रहा था। समुद्र की भीषणता को देखकर नर्मदा ने कहा—

स्वामिन! समुद्र की भीषणता के कारण ही आचार्यों ने संसार की उपमा समुद्र से दी है। नगर, वन, पर्वत, सहित पृथ्वी कहां चली गयी ? क्या रवि, शशि और नक्षत्र आदि भी जलचर है, जो जल में डूबते है, निकलते हैं। इतना विराट समुद्र अभी तक नहीं देखा था, यहाँ तो जल राशि के अतिरिक्त अन्य कुछ भी दिखलाई नहीं पड़ता।

देवी! भय मत करो, मेरे पास स्थित होकर इस अपूर्व समुद्र का अवलोकन करो।

इस प्रकार परस्पर मधुआलाप करते हुए कई दिन व्यतीत हो गये। जलयान अपनी गति से समुद्र की छाती को चीरता हुआ बढ़ रहा था। एक दिन मध्यरात्रि के समय कोई व्यक्ति मनोहर स्वर पूर्वक का गाना गा रहा था। उसका स्वर सुनकर महेश्वर ने नर्मदा से पूछा—

नर्मदे! तुम इसके रूप का वर्णन कर सकती हो। कितना मधु स्वर है, इस मधुर स्वर के अनुसार इसका रूप भी अद्भुत होना चाहिए।

स्वामिन्! मैं स्वर के आधार पर इसके रूप का विश्लेषण कर सकती हूँ। यह श्याम वर्ण का है, पर स्त्री लम्पट है तथा युवतियों के मन को चुराने वाला है। इसके गुह्य स्थान में प्रवाल के समान मस्सा भी है।

इस वर्णन को सुनकर महेश्वर सोचने लगा।

क्या मेरी पत्नी पुँश्चली है, जो इस व्यक्ति की गुह्य बातों को भी जानती है?

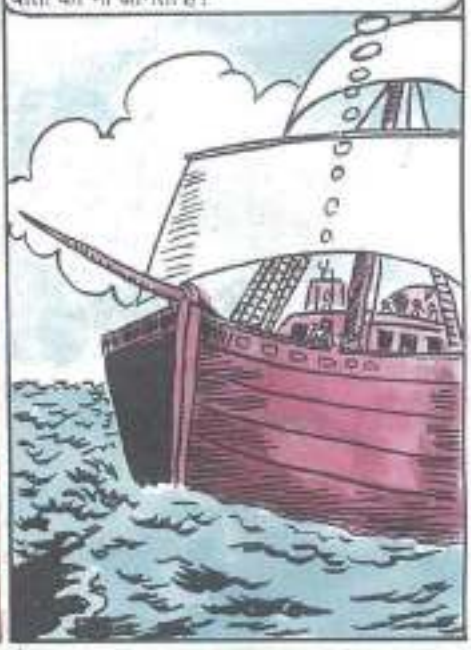

उसने प्रत्यक्ष रूप से पूछा—प्रिये! तुम इसके स्वरूप को कैसे जानती हो।

गुरुमुख से मैंने शास्त्रों का अध्ययन किया है उन शास्त्रों में बताया गया है कि स्वर के अनुसार व्यक्ति के रूप और आकृति का निर्धारण किस प्रकार किया जा सकता है। स्वर और आकृति में कार्य करण सम्बन्ध है, अतः जिसे कार्य–करण सम्बन्ध की जानकारी रहती है, यह स्वर से आकृति और आकृति से स्वर का ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

महेश्वर को नर्मदा के उक्त कथन से संतोष नहीं हुआ। उसके मन में आशंका प्रविष्ट हो गयी और वह सोचने लगा—

जब तक किसी व्यक्ति के साथ किसी रमणी का विशेष सम्पर्क न हो, तब तक वह उसके गुह्य स्थान के मस्से की बात कैसे जान सकती है, अवश्य ही मेरी स्त्री पुँश्चली है। इस व्यक्ति की समस्त बातें मालूम हैं। अतः सम्भव है कि इसके साथ इसका अनुचित सम्बन्ध हो। संसार में समस्त रहस्यों को जाना जा सकता है, पर महिला हृदय को जानना कठिन है। यह हृदय तो इतना रहस्यपूर्ण है कि बड़े–बड़े ज्ञानी भी नारी के समक्ष अपने को अज्ञानी समझते हैं।

उस धूर्त ने गाना गाकर नर्मदा को अपने पास बुलाने का संकेत किया है। निश्चय ही यह धूर्त पर स्त्री लम्पट व्यक्ति इसके हृदय में निवास करता है। यह मेरे साथ इसीलिए आई है कि स्वच्छन्द होकर अपने इस जार के साथ विहार कर सके।

यह धूर्त संध्या और मध्यरात्रि में अपना गाना गाकर इस सुन्दरी को बुलाने का संकेत करता है। जिस प्रकार चन्दन वृक्ष का त्याग कर मक्खियाँ अशुचिद्रव्य के स्पर्श को ही सर्वस्व समझती है। उसी प्रकार नारियाँ भी रूप यौवन युक्त पति का त्याग कर धूर्त और विटों का सहवास करती है। नारियाँ झूठे स्नेह का प्रदर्शन करती हैं, कपट द्वारा मन का अनुरञ्जन करती हैं, पर उनके हृदय के वास्तविक भाव को कोई भी नहीं जान सकता है।

वह सोचने लगा— इस पुंश्चली के साथ अब मेरा रहना सम्भव नहीं है। अतः किसी तरह इसका परित्याग करना चाहिए। यदि मैं इसका वध करूँगा तो स्त्री हत्या का पाप लगेगा, जो ठीक नहीं। ऐसा उपाय करना चाहिए। जिससे यह अपने किये दुष्कर्म का फल स्वयं प्राप्त करें।

इस प्रकार ऊहापोह करने के पश्चात् उसने निश्चय किया कि इस समुद्र के मध्य में अत्यन्त विस्तृत भूतरमण नामक द्वीप है। इसमें मनुष्य निवास नहीं करते और वहाँ भोजनादि की वस्तुएं ही अनुलपब्ध है। अतः उस निर्जन द्वीप में इसका परित्याग कर देने से यह अपने किये गये कर्मों का फल स्वयं प्राप्त करेगी। उसने घोषणा की कि—

मधुर जल से परिपूर्ण महा ऊर्ध नामक जल का कुण्ड भूत रमण द्वीप में है, अतः वहाँ से जल लेकर आगे बढ़ेंगे।

प्रातःकाल होने पर जलयान भूत रमण द्वीप में पहुँचा और वहाँ लंगर डाल दिये। सभी जल लेने के लिए चल पड़े। महेश्वर ने नर्मदा से कहा—

प्रिये! जब तक अन्य साथी जल लेकर आते हैं तब तक तुम्हें यहाँ के मनोरम उद्यानों का परिभ्रमण करा देना चाहता हूँ। यहाँ की भूमि बहुत ही सुन्दर है और आगे चलने पर प्रकृति का रमणीय साम्राज्य व्याप्त मिलेगा। हम लोग उस रम्यदृश्य का अवलोकन कर कृतार्थ हो जायेंगे। यहाँ हमें सुस्वाद फल और सुगंधित पुष्प मिलेंगे।

आगे बढ़ने पर आम, नारियल, जामुन, नींबू, नारंगी, दाडिम, द्राक्षा आदि के वृक्ष और लताएं उपलब्ध हुई पर आश्चर्य की बात यह थी कि वहाँ एक भी मनुष्य दिखलाई नहीं पड़ता था। वह स्थान वीरान था, बिल्कुल एकान्त और सुनशान था। एक स्थान पर लता मण्डप देखकर नर्मदा ने प्राणेश्वर से निवेदन किया—

प्रियतम! मैं बहुत थक गई हूँ अतः मेरी इच्छा यहाँ विश्राम करने की हो रही है। यद्यपि यह स्थान वीरान है पर है अत्यन्त रमणीय। इस कदली घर की छाया कितनी मनोहर है, यहाँ बैठते ही शीतलता का अनुभव होता है।

इस प्रकार निवेदन करती हुई नर्मदा ने एक लता मण्डप के नीचे पल्लव और पुष्पों की शय्या तैयार की। थोड़े समय तक विश्राम करने हेतु वह लेट गई और उसे निद्रा आ गई। नर्मदा को सोते देख कर महेश्वर दत्त बहुत प्रसन्न हुआ। उसके हृदय में क्रूरता की भावना पहले से ही व्याप्त थी। अतः वह उस सुन्दरी को वहीं सोती हुई छोड़ कर चल दिया। अपने स्थान पर आकर उसने जलपोत के लंगर खोल दिये। पाल तानने के कारण जलपोत बड़ी तेजी से समुद्र का वक्षस्थल चीरते हुए आगे बढ़ने लगे। सभी साथियों के साथ महेश्वर दत्त आनन्दित होता हुआ चला जा रहा था।

जब नर्मदा सुन्दरी की नींद टूटी और अपने पास महेश्वर दत्त दिखलाई नहीं दिया तो उसका हृदय आशंका से भर गया। उसने उठकर इधर-उधर महेश्वर की तलाश की, जब वह उसे नहीं दिखलाई पड़ा, तो उसका धैर्य टूट गया। उसने रोना कल्पना आरम्भ कर दिया। वह अबला त्रस्त हिरणी के समान इधर-उधर विचरण करने लगी। उसके चीत्कार को सुनकर वन-उपवन के पशुओं के हृदय भी विदीर्ण होने लगे। वे भी इस रुदन करती हुई बाला के ऊपर दयालु हो रहे थे।

उधर महेश्वर दत्त के साथियों ने उससे पूछा—आपकी पत्नी कहाँ रह गई, वह क्यों नहीं दिखाई पड़ती है?

जब मैं उपवन की ओर बढ़ा तो वहाँ एक भयंकर राक्षस मिला, जो मेरी प्राणेश्वरी का भक्षण कर गया। वह तो मेरी ओर भी झपटा था, पर मैं उससे किसी प्रकार बचकर निकल आया। उस राक्षस के आतंक के कारण ही तो मैंने यहाँ से अपने जलपोत को शीघ्र रवाना कर दिया है।

शायद आप लोग आश्चर्य कर रहे होंगे कि इस द्वीप में दो चार दिन हम लोगों ने निवास क्यों नहीं किया हमारे नाविकभी दिन-रात नाव चलाने के कारण थक गये हैं। अतः यहाँ विश्राम करना आवश्यक था। पर उस राक्षस की आकृति को देखकर मुझे अभी भी भय लग रहा है। इसी कारण जलयान को तीव्रगति से आगे बढ़ाया जा रहा है।

नर्मदा सुन्दरी के करुण क्रन्दन को उस निर्जन प्रदेश में कोई भी सुनने वाला नहीं था। वह रोती हुई मूर्छित हो जाती। जब मूर्छा दूर हुई तो पुनः रोने लगी। प्रतिक्षण उसका गला बन्द्धिगत होता जा रहा था। कभी वह शून्य वन-वीथिकाओं में दौड़ने लगी, कभी समूह में भटकी हुई हरिणी के समान इधर-उधर दौड़ लगाती। इस प्रकार उसको रुदन करते हुए संध्या हो गयी। सूर्य भी अस्ताचल की ओर गमन करने का उपक्रम कर रहा था। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि नर्मदा के विलाप को सुनने में असमर्थ होने के कारण सूर्य पश्चिम समुद्र में अस्त होने जा रहा है।

जब सूर्य का उदय हुआ तो नर्मदा की स्थिति पूर्ववत ही थी। उसने किसी प्रकार रोते कलपते रात्रि व्यतीत की। सूर्य यह जानने के लिए पुनः उदय को प्राप्त हुआ कि पति वियोग से दुःखी वह बाला अभी जीवित है या मर चुकी है। जिन चन्द्रमा और नक्षत्रों ने उस विरहिणी बाला को कष्ट दिया था, वे भी अपने पाप का प्रायश्चित करने के लिए अस्त हो रहे थे। नर्मदा सुन्दरी रह-रह कर अपने प्राणाधार महेश्वर को पुकारती थी।
आपने किस अपराध के कारण मेरा त्याग किया है। आप अत्यन्त दयालु और धर्मात्मा है, फिर इस प्रकार का दण्ड क्यों दिया? नाथ, मेरे अपराधों को क्षमा कर आप सामने आईये और मुझे धैर्य बधाइये।
जब नर्मदा ने देखा की विलाप करने से कोई लाभ नहीं। अतः वह धीरे-धीरे शान्ति प्राप्त करने की चेष्टा करने लगी, पर कभी उसका हृदय उस दुःख से विदीर्ण होने लगता था। एक दिन उसने आकाशवाणी सुनी
सुन्दरी! तुम्हारा पति तुम्हें बुद्धिपूर्वक यहाँ छोड़कर चला गया है। अब तुम व्यर्थ ही उसके लिए रुदन करती हो। उसकी प्राप्ति होने में अभी बहुत समय है। तुम्हें अनेक परीक्षाओं से उत्तीर्ण होना पड़ेगा, तभी तुमको उसकी प्राप्ति होगी।
इस वाणी को सुनकर वह सुन्दरी आश्चर्यचकित हो गयी और उसे वस्तुस्थिति समझने में विलम्ब नहीं हुआ। वह सोचने लगी-
मुनिश्राप के कारण ही मुझे यह विपत्ति प्राप्त हुई है अथवा इसमें मुनि का क्या अपराध, यह मेरे पूर्वकृत कर्मोदय का फल है। मनुष्य पूर्व जन्म में जैसे शुभाशुभ कर्म करता है। उन्हीं के अनुसार उसे अच्छे और बुरे फल प्राप्त होते है। क्या मैं इस विपत्ति से ऊब कर प्राणघात कर लूँ, पर प्राणघात तो महापाप होता है। प्राण घात करने से दुःखों का अन्त नहीं होगा बल्कि दुःखों की परम्परा और बढ़ती जायेगी। अतएव यदि मैं जम्बूद्वीप में किसी प्रकार पहुँच जाऊं तो अवश्य ही आर्यिका दीक्षा धारण कर लूँगी।
इस प्रकार मन में निश्चय कर वह पञ्च नमस्कार मंत्र का चिन्तन करने लगी।

विपत्ति और दुःखों का निराकरण पञ्च नमस्कार मंत्र के चिन्तन से होता है। इस मंत्र का स्मरण करते ही दुःख काफूर हो जाते हैं और संसार के सभी सुख उपलब्ध होने लगते हैं। आत्मोत्थान का साधन वीतरागता है, जो वीतरागी है, राग द्वेष से रहित हैं, वही शाश्वत सुख को प्राप्त कर सकता है। जो साधनालीन तपस्वी है वह सुकुमाल मुनि की तरह भयानक से भयानक उपसर्ग आने पर भी विचलित नहीं होता। अतएव मैं भी अपने व्रतचार में दृढ़ होऊंगी और आत्मचिन्तन करती हुई अपने समय का यापन करूँगी—

समय परिवर्तनशील है। नर्मदा सुन्दरी के भाग्य ने पलटा खाया। शून्यद्वीप के दुःखों का अन्त निकट आ गया। वह धर्म ध्यान में लीन रहती थी, पञ्च नमस्कार मंत्र का चिन्तन करती थी तथा प्रतिदिन भावभक्ति करती हुई शरीर धारण हेतु फलहार करती थी। इस प्रकार उसे उसद्वीप में निवास करते हुए पर्याप्त समय बीत गया।

अकस्मात् एक दिन जलाभाव हो जाने से वीरदास का जलयान भूतरमण नामक शून्यद्वीप में पहुँचा। निस्संदेह इस द्वीप के जल कुण्ड का नीर अमृत के समान सुस्वादु था। निर्जन होने पर भी फलादि ग्रहण करने के लिए जब तब जलयान वहाँ आते रहते थे। आज वीरदास का शिविर इस द्वीप में स्थित था। उसके साथी जल भरने के लिए गये हुए थे और वह वृक्ष समूह की शोभा का अवलोकन करता हुआ वहाँ आया, जहाँ नर्मदा सुन्दरी ध्यान लगाये हुए अवस्थित थी। उसने उसे देवकन्या या नागकन्या समझा। वीरदास नर्मदा के पास पहुँचा और उसे देखतेही आश्चर्यचकित हो गया। उसने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि यहाँ उसकी भतीजी नर्मदा मिलेगी। उसके मन में आशंका हुई कि—

नर्मदा के रूप में यह कोई व्यन्तरी या किन्नरी तो नहीं है। सम्भवतः मुझे धोखा देने के लिए इसने यह रूप धारण किया है। नर्मदा तो अपने पति महेश्वर के साथ यवन द्वीप को गई हुई है, वह यहाँ कहाँ से आ सकती है। अवश्य यह कोई प्रपंच है।

साहस एकत्र कर वीरदास ने पूछा—देवी! तुम कौन हो, यहाँ किस उद्देश्य से निवास करती हो?

तात! मैं भाग्य से प्रताड़ित नर्मदपुर के व्यवसायी सहदेव की पुत्री और वर्द्धमानपुर के सार्थवाह माहेश्वर दत्त की पत्नी हूँ। मुझ भाग्यहीन को मेरा पति न मालूम किस कर्मोदय का दण्ड देने के लिए यहाँ सोते छोड़कर चला गया है। अब मैं यहाँ फलाहार करती हुई तपश्चरण पूर्वक अपना समय व्यतीत कर रही हूँ।

वीरदास की आवाज को पहचान कर नर्मदा अपने चाचा के चरणों में लिपट गयी और फूट-फूट कर रोने लगी। यत: आत्मीय व्यक्तियों के मिलने पर दु:ख पुन: नया हो जाता है। पहाड़ी झरना पत्थर की चट्टान से अवरुद्ध रहता है। पर जैसे ही वह चट्टान को तोड़ देता है, पुन: अत्यधिक वेग से प्रवाहित होने लगता है। इसी प्रकार जो दु:ख किसी कारण वश नीचे दबा रहता है, वह आत्मीय स्वजनों के मिलने पर एकाएक पुन: फूट पड़ता है।

नर्मदा को वीरदास ने आश्वासन दिया, उसे नाना प्रकार से सांत्वना देकर समझाया और कहा—

बेटी! धैर्य धारण करो और यह बतलाओ कि तुम्हारी यह स्थिति किस कारण हुई?

तात! पता नहीं किस अपराध के कारण मेरे पति मुझे यहाँ सोती हुई छोड़कर चले गये। जब मैं अपने पति के विरह में भ्रमण कर रही थी तो आकाशवाणी सुन कर मैं ने तथ्य की जानकारी प्राप्त की।

उसने यहाँ आने तक का सारा वृतान्त कह सुनाया.....

उक्त वृतांत को सुनकर वीरदास के मन में वेदना हुई और उसने नर्मदा को धैर्य देकर स्नान उबटन अलंकरण। भोजन एवं दुग्धपान आदि कराया, इस प्रकार भोजन आदि की व्यवस्था होने से नर्मदा सुन्दरी स्वस्थ हो गयी। वीरदास ने अपने सेवकों को आदेश दिया।

नर्मदा की प्राप्ति होने से मेरे मनोरथ सफल हो गये, अत: यहीं से अपने देश को लौट चलना चाहिए। आगे चलने से कोई लाभ नहीं।

स्वामिन्! हम लोग बहुत आगे चले आये हैं। यहाँ से बब्बर कूल पास ही है। अत: अब यहाँ तक चले बिना लौट चलना उचित नहीं।

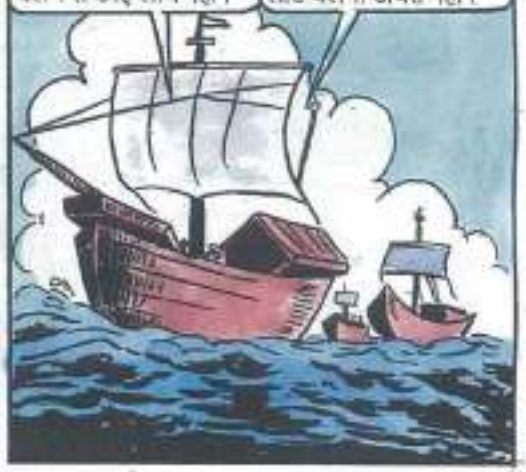

अनुकूल वायु की प्रेरणा के कारण जलयान कुछ ही दिनों में सुन्दर बब्बर कूल के निकट पहुँच गया। सामान को उतारा जाने लगा। समुद्र तट पर जलयान के लगते ही व्यापारी सामान लेने के लिए आ गये। वह नगर भी धन जन से सुशोभित बब्बर नाम का था और यहाँ पर सोना, रत्न आदि पदार्थों की प्रचुरता थी। नगर की शोभा अद्भुत थी। इसकी अट्टालिकाएँ आकाश को छूती थी और तिमंजिले, पौनंजिले भवन हृदय को संतुष्ट कर देते थे। इस नगर का व्यवस्थापक इन्द्रसेन नामक व्यक्ति था। इसके यश से सभी दिशाएँ उज्ज्वल थी। धन धान्य से समृद्ध होने के साथ शासक अत्यन्त पराक्रमी और वैभवशाली था। यहाँ की जनता सभी प्रकार सुखी और प्रसन्न थी।

इस नगर में वारांगनाओं का एक मोहल्ला था. इस मोहल्ले में सात सौ गणिकाएं निवास करती थी और इन सब की स्वामिनी हरिणीनाम् की गणिका थी। सभी गणिकाएं धनार्जन करती थी और उस धन का एक निश्चित अंश हरिणी को देती थी। हरिणी अपनी आयका चतुर्थांश राजा को कर के रूप में देती थी। जब हरिणी को ज्ञात हुआ कि जम्बूद्वीप का कोई धनी सार्थवाह आया है। तो उसने अपनी दो दासियों को बहुत सुन्दर मूल्यवान वस्त्र देकर भेजा और कहलवाया कि आज मेरे घर का आतिथ्य स्वीकार कीजिये। यह राजाज्ञा है, इसे स्वीकार करना आवश्यक है।

मुझे आप की स्वामिनी से मिलने की आवश्यकता नहीं। हमारे कुलकी यह परम्परा है कि किसी भी वेश्या के घर नहीं जाना। तुम्हारी स्वामिनी को धन की आवश्यकता है, अतः आठ सौ द्रम्म लेकर चली जाओ।

हरिणी को वीरदास का बर्ताव बहुत ही बुरा लगा। जब दासियाँ वीरदास को आमन्त्रित करने आईं तो उनकी दृष्टि नर्मदा पर पड़ी। नर्मदा के अपूर्व सौन्दर्य को देखकर वे आश्चर्य चकित हो गईं और उन्होंने इस बात की चर्चा अपनी स्वामिनी से की। हरिणी ने दासियों को नर्मदा को फुसला कर भगा लाने के लिए भेजा वे नर्मदा के निकट पहुँचीं, पर वह उनकी बातों में न फँसी। वे दासियाँ किसी प्रकार वीरदास के पास गईं और नौकरों को बदले में स्वर्ण मुद्राएं देकर उन लोगों से वीरदास की मुद्रा ले लीं।

एक दिन जब वीरदास बाहर गया हुआ था कि हरिणी की दासियाँ नर्मदा सुन्दरी के पास पहुँचीं और कहने लगीं—

वीरदास हमारी स्वामिनी के यहाँ है, उन्होंने यह पत्र आपके पास भेजा है तथा पत्र में उनकी मुद्रा अंकित है।

नर्मदा सुन्दरी को उन दासियों पर आशंका तो पहले से ही थी। पर वीरदास की मुद्रा देखकर विश्वास करना पड़ा। वह उनके साथ चल दी। वे उसे हरिणी के यहाँ ले गयीं। नर्मदा सुन्दरी को वहाँ पहुँचने पर बहुत निराशा हुई। उसने पूछा—

मेरे तात कहाँ है?

तुम्हारे तात की यहाँ क्या आवश्यकता है? यहाँ तो तुम्हारी जैसी सुन्दरी की आवश्यकता है, जो अपने रूप के जादू से सूर्य को भी परास्त कर सकती है। तुमने यह रूप कहाँ से प्राप्त किया है?

तुम चुप रहो। मेरे समक्ष अनर्गल बातें करना ठीक नहीं। तुमने धूर्तता पूर्वक मुझे यहाँ धोखे से बुलाया है।

नर्मदा ने अपने आप को असहाय समझ कर रोना धोना आरम्भ किया–वह विलाप करती हुई कहने लगी–
हाय तात! आपने मेरा शून्य द्वीप से उद्धार किया मैंने समझा कि मेरी विपत्ति अन्त हो गया किन्तु अभी भी मेरी विपत्ति शेष है। इस नरक से मेरा किस प्रकार उद्धार होगा? ये रूप का सौदा करने वाली वारांगनाएं शील का महत्व क्या समझें।
नर्मदा ने अनेक प्रकार से विलाप किया। उसके करूण क्रन्दन से पशु पक्षी भी द्रवीभूत हुए, पर क्रूर हृदया हरिणी न पसीजी। वह उसे वेश्या बनाने के लिए बाध्य करती रही।
सुन्दरी! मानुषी का जन्म दुर्लभ है। तारुण्य क्षण भंगुर है विशिष्ट सुख का अनुभव करना ही इसका फल है। वह समस्त वेश्याओं को प्राप्त होता है। कुल वधुओं को नहीं। विशिष्ट प्रकार का भोजन प्रतिदिन खाने से वह जिह्वा को सुख नहीं देता। प्रति दिन नया भोजन चाहिए। इसी प्रकार नये–नये पुरुष नये–नये भोग सुख को प्रदान करते हैं।
वेश्याएं स्वच्छन्द विचरण करती है, अमृत के समान मद्यपान करती है, वेश्यावस्था साक्षात् स्वर्ग की भांति मनोहर है। जो रमणी इस अवस्था का अनुभव एक बार कर लेती है, वह फिर इस सुख का त्याग नहीं कर सकती। तुम रति के तुल्य सुन्दरी हो। राजा महाराजा, सेठ–साहूकार सभी तुम्हारे चरणों के दास बन जायेंगे। तुम्हारे आधीन होकर वे तुम्हें अपार धन देंगे। इस मोहल्ले की सभी वेश्याएं आधा–धन मुझे देती है, तुम मुझे विशेष प्रिय हो, अतः मैं तुम से केवल चतुर्थांश ही लिया करूँगी।
तुम अत्यन्त नीच कुक्कुरी हो। निर्लज्ज होने के कारण तुम्हें इस प्रकार की बातें करते हुए शर्म नहीं आती। भले घर की बहू बेटियों को फँसाकर लाना और उनसे वेश्यावृत्ति कराना कहाँ तक उचित है? तुम्हें इन नीच कर्मों का फल अवश्य प्राप्त होगा। याद रखो, तुम्हें अपने कर्मों के फल स्वरूप इसी जीवन में नरक वेदना भोगनी पड़ेगी। तुम्हारा शरीर गल जायेगा और तुम्हें अपने पाप का प्रायश्चित करना होगा।

हरिणी ने उसे नाना प्रकार की यातनाएं देना प्रारम्भ किया। उसने विट पुरुषों को बुलाकर बलपूर्वक उसके सतीत्व अपहरण की व्यवस्था की, किन्तु पुण्योदय से नर्मदा अपने सतीत्व में अटल बनी रही। वह दिन-रात पंच नमस्कार मंत्र का स्मरण करती हुई भोजन पान छोड़कर भगवत् ध्यान में लीन रहने लगी।

इसी मोहल्ले में करिणी नामकी वैश्या भी रहती थी। उसे नर्मदा पर दया आ गई और उसने हरिणी से निवेदन किया कि—

नर्मदा को भोजन बनाने के लिए मेरे यहाँ नियुक्त कर दिया जाये। मैं इसे तब तक समझा बुझाकर यथार्थ मार्ग पर भी लाने का प्रयास करूँगी।

हरिणी ने करिणी की बात स्वीकार कर ली और नर्मदा पाचिका का कार्य करने लगी। अब वह प्रभु चरणों का ध्यान करती हुई अपने बनाये हुए भोजनों से शरीर धारण के हेतु भोजन ग्रहण करती। इस प्रकार उसका जीवन व्यतीत होने लगा।

वीरदास को नर्मदा सुन्दरी के चले जाने से बहुत दुःख हुआ और उसने उसको सर्वत्र तलाश की। जब उसे नर्मदा सुन्दरी का पता न चला तो वह उस नगर के राजा के पास पहुँचा और कहने लगा—

देव! मेरी बेटी का कोई अपहरण करके ले गया है। उसकी प्राप्ति के लिए उसके वजन के बराबर सोना देने के लिए तैयार हूँ। कृपया अपने गुप्तचरों द्वारा मेरी बेटी का पता लगवाने का कष्ट कीजिएगा।

राजा ने लगातार तीन दिनों तक नगर में घोषणा कराई कि—

जो व्यक्ति नर्मदा का पता बतलायेगा या उसे ले आयेगा, उसे नर्मदा के वजन के बराबर सोना दिया जायेगा।

जब नर्मदा का कुछ पता नहीं लगा तो वीरदास मूर्छित हो गया इसी समय उसके साथी वहाँ आये और उन्होंने चन्दन द्रव छींटकर उसे चेतन किया। नर्मदा के न मिलने से वीरदास की स्थिति बहुत खराब हो गई है, वह कभी रुदन करता है, कभी चिन्ता के कारण लम्बी सांसे लेने लगता है और कभी विलाप करता हुआ कहता है—

बेटी! तुम मुझे शुन्यद्वीप में प्राप्त हो गयी, अब कहाँ पर हो, क्यों नहीं आकर मुझे सांत्वना देती हो।

क्या मैंने जन्मान्तर में किसी की बेटी का अपहरण किया था जिसके कारण यह कष्ट मेरे ऊपर आया है। हाय मैं नर्मदा के बिना कहीं मुँह दिखाने लायक भी नहीं है।

वीरदास ने नाना प्रकार से विलाप किया। उसके साथियों ने भी उसे समझाया कि—विलाप करना निरर्थक है। अब तो धैर्य धारण कर इस वियोग जन्य कष्ट को सहना पड़ेगा। यह सम्भव हो सकता है कि हम लोग एक बार अपने द्वीप को लौट जाये, पश्चात् यहाँ पुनः आवे और नर्मदा की तलाश करें। इस समय तो नर्मदा का मिलनी सम्भव नहीं है।

निराश होकर वीरदास अपने घर चला आया। उसे यह विश्वास था कि सुमेरू पर्वत विचलित हो सकता है, सूर्य पश्चिम दिशा में उदय को प्राप्त कर सकता है, समुद्र में अग्नि उत्पन्न हो सकती है, पर नर्मदा अपने शील को खण्डित नहीं कर सकती।

नर्मदपुर निवासियों को जब नर्मदा के अपहरण का समाचार मिला तो सभी संताप करने लगे। नगरवासियों को नर्मदा के रूप, शील और गुणों का स्मरण कर आन्तरिक वेदना हो रही थी। वे इस कल्पना से अत्यधिक दुःखी हो रहे थे कि—

शीलवती नर्मदा को कोई कष्ट दे रहा होगा, उसे मारन, ताड़न आदि अनेक प्रकार के कष्ट मिल रहे होंगे।

हरिणी की मृत्यु के पश्चात् गणिकाओं के समक्ष यह समस्या उत्पन्न हुई कि अब गणिकाओं की स्वामिनी कौन बने। सभी गणिकाएँ शृंगार कर एकत्र होने लगीं। आज निर्वाचन का दिन था और यह निर्वाचन कार्य पंचकुल द्वारा सम्पन्न होने को था। पंचकुल ने उन गणिकाओं के रूप, सौन्दर्य और यौवन को देखा सभी एक से एक बढ़ कर थीं। इसी समय धूल-धूसरित रूखे बाल वाली, मैले शरीर से युक्त और रतिसम सुन्दरी नर्मदा उन्हें दिखाई पड़ी। वे नर्मदा के इस अपूर्व लावण्य को देखकर आश्चर्य चकित हो गये। वे यह भूल गये कि उन्हें न्यायसंगत निर्णय करने का कार्य मिला है। शृंगार की हुई सभी रूप सुन्दरियाँ उन्हें फीकी जँची। उन्होंने अपना निर्णय सुनाते हुए कहा—

इस गणिका को स्नान कराकर वस्त्राभूषणों से अलंकृतकरो, गणिका के पद पर अभिषेक होगा। इस जैसा सौन्दर्य लावण्य और तारूण्य कहीं नहीं प्राप्त है। प्रधान गणिका बनने की समस्त योग्यताएं इसके पास है।

उन्होंने नर्मदा से निवेदन किया.....

देवी! आज से राजा ने तुम्हारे लिए हरिणी का भवन, परिवार, परिचारक, वैभव और मान्यता प्रदान की है। तुम स्वेच्छा से इन वेश्याओं का अनुशासन करती हुई इस वैभव के साथ निवास करो। आज से समस्त वैभव तुम्हारा और तुम इस गणिका मोहल्ले की स्वामिनी हो।

नर्मदा पंचकुल के इस प्रस्ताव को सुनकर अत्यधिक दुःखी हुई। वह सोचने लगी कि पूर्वकृत कर्मों का ही यह विपाक है। जिससे इस प्रकार के नीच कर्म को करने के लिए मुझे प्रेरित किया जा रहा है। उसने अपने मन में नाना प्रकार से पश्चाताप करते हुए करिणी से कहा—

सखी, तुम मेरी अत्यन्त प्रिय और हित चिन्तिका हो। मेरे मन की समस्त परिस्थिति को जानती हो। अतएव तुम उक्त पद पर प्रतिष्ठित हो जाओ। जो व्यक्ति आया करे उनकी तुम्हीं सेवा करना। मैं आपके यहाँ किसी कोने में छिपी पड़ी रहूँगी।

नर्मदा का अनुरोध करिणी ने स्वीकार कर लिया और नर्मदा पूर्ववत् धर्मध्यान करती हुई काल यापन करने लगी। एक दिन सजधजकर एक धनिक युवक आया और पूछने लगा—

तुम्हारी स्वामिनी कहाँ गई है?

महानुभाव, मैं इस समय प्रधान गणिका के पद पर प्रतिष्ठित हूँ। आप मुझे पहचानने में भूल कर रहे हैं।

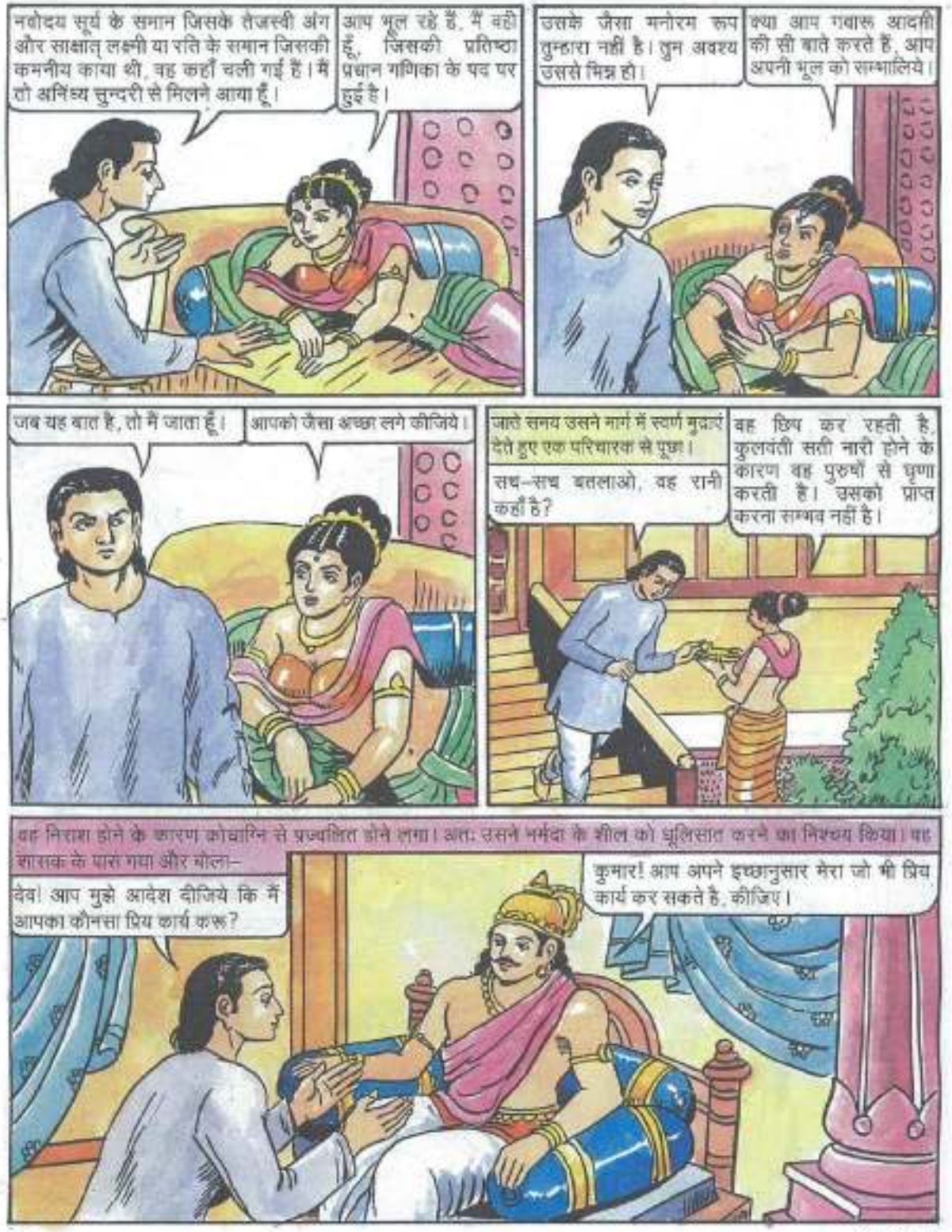
नवोदय सूर्य के समान जिसके तेजस्वी अंग और साक्षात् लक्ष्मी या रति के समान जिसकी कमनीय काया थी, वह कहाँ चली गई हैं। मैं तो अनिंद्य सुन्दरी से मिलने आया हूँ।
आप भूल रहे हैं, मैं वही हूँ, जिसकी प्रतिष्ठा प्रधान गणिका के पद पर हुई है।
उसके जैसा मनोरम रूप तुम्हारा नहीं है। तुम अवश्य उससे भिन्न हो।
क्या आप गवारू आदमी की सी बातें करते हैं, आप अपनी भूल को सम्भालिये।
जब यह बात है, तो मैं जाता हूँ।
आपको जैसा अच्छा लगे कीजिये।
जाते समय उसने मार्ग में स्वर्ण मुद्राएं देते हुए एक परिचारक से पूछा।
सच-सच बतलाओ, वह रानी कहाँ है?
वह छिप कर रहती है, कुलवंती सती नारी होने के कारण वह पुरुषों से घृणा करती है। उसको प्राप्त करना सम्भव नहीं है।
वह निराश होने के कारण कोपाग्नि से प्रज्वलित होने लगा। अतः उसने नर्मदा के शील को धूलिसात करने का निश्चय किया। वह शासक के पास गया और बोला-
देव! आप मुझे आदेश दीजिये कि मैं आपका कौनसा प्रिय कार्य करूं?
कुमार! आप अपने इच्छानुसार मेरा जो भी प्रिय कार्य कर सकते है, कीजिए।

देव! इस नगर में एक ऐसी नारी है, जो त्रिलोकी की सुन्दरी है और देवांगनाओं के रूप–सौन्दर्य को भी तिरस्कृत करती है। वह किसी को भी अपना रूपवैभव समर्पित करने को तैयार नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रजापति ने उसका निर्माण आपके लिए ही किया है। अतः महाराज! रूप, यौवन, राज्य और धन से क्या लाभ यदि वह सुन्दरी प्राप्त न हुई। आपका अन्त:पुर उसी रमणीरत्न से सुशोभित हो सकता है।

कुमार! वह रमणी रत्न कौन है? जिस की आपने अब तक प्रशंसा की है।

हरिणी के पद पर प्रतिष्ठित प्रधान गणिका

यह समाचार नर्मदा सुन्दरी को भी अवगत हुआ। वह सोचने लगी–

चक्रवाक जल में पड़ने वाले अपने प्रतिबिम्ब को चकवाकी समझकर आशान्वित होता है, पर चंचल तरंगे उस प्रतिबिम्ब को भी शीघ्र विघटित कर देती है। विधाता बड़ा ही निपुण है। मैं जब तक एक दुःख समुद्र से पार नहीं हुई, तब तक दूसरा पहाड़ टूट पड़ा।

यहाँ का बब्बर राजा अत्यन्त क्षुद्र, क्रोधी, अधर्मी, नारकी, महापापी और क्रूर है। इससे अपने शील की रक्षा करना बहुत कठिन है। अतएव मैं कहाँ जाऊँ, क्या करूँ, किससे अपने मन के दुःख को कहूँ, कुछ समझ में नहीं आता। यह सत्य है कि प्राणों की अपेक्षा शील अधिक मूल्यवान है। अरे भाग्य तूने मुझे इतना सौन्दर्य क्यों दिया? यह सौन्दर्य ही तो मेरी विपत्ति का कारण बना हुआ है।

इस प्रकार संताप करती हुई नर्मदा शील रक्षा के लिए विचलित हो उठी। एका–एक उसे धनेश्वर का कथानक स्मरण हो आया। वसन्तपुर नगर में धनपति सेठ का पुत्र धनेश्वर रहता था। वह दुर्भाग्य वश दरिद्र हो गया और दरिद्रता से पीड़ित होकर अत्यन्त दुःख प्राप्त करने लगा। एक दिन उसने सोचा कि परदेश गमन करने पर ही यह दारिद्रय नष्ट हो सकता है। वह अपने विचारानुसार अपने परिवार की व्यवस्था करके दूर देश चला गया।

और वहाँ एक गाँव में गाय चराने का काम करने लगा। इस कार्य से उसने कुछ ही महीनों में पर्याप्त धन संचित कर लिया और अब उसने व्यापार करना आरम्भ किया। व्यापार द्वारा धन कमाने पर सोचने लगा।
विदेश में कितना ही धन रहे उससे क्या लाभ। धन की उपयोगिता स्वदेश में है, क्योंकि वहीं पर सम्मान, आदर और प्रतिष्ठा प्राप्त होती है, अतएव अब यहाँ से अपने देश को चलना चाहिए। पर मार्ग में चोर लुटेरे बहुत है उन से यह धन किस प्रकार सुरक्षित पहुँच सकेगा।
अतः उसने यह बाधित पागल का सा वेश बनाया और समस्त धन से रत्न खरीद लिए, तथा चिल्लाता हुआ कि—
मैं रत्न लिये जाता हूँ। मैं रत्न लिये जाता हूँ।
जाने लगा, चोरों ने उसका पीछा किया और पकड़ लिया तथा पूछा कि—
रत्न तुम्हारे पास कहाँ है?
उसने अपनी गठरी दिखाई। चोरों ने समझा कि यह पागल है, इसी कारण बक रहा है। जिसके पास रत्न होंगे वह कहता थोड़े ही चलेगा। रत्न छिपाकर रखने की वस्तु है, कहने की नहीं।
इस उपाय से धनेश्वर सकुशल रत्न लेकर अपने घर पहुँच गया। अब मुझे भी इसी प्रकार पागलों जैसा व्यवहार कर अपने शील रत्न की रक्षा करनी है।
राजा इन्द्र सेन ने अपने दण्डधरों को गणिकाओं के मोहल्ले में भेजा। उन्होंने वहाँ जाकर रानी नर्मदा को राजा द्वारा बुलाये जाने की चर्चा की। नर्मदा ने स्नान, अलंकरण किया और सुन्दर वस्त्राभूषण पहन कर राजा के यहाँ चलने को प्रस्तुत हो गयी। वह शिविका में आरूढ़ हो चल दी।
जब मार्ग में एक पुष्करणी के निकट पहुँची तो जल पीने हेतु वहाँ गयी। इस सरोवर के निकट एक गड्ढा था, उसमें वह जानबूझकर गिर गयी। उसने अपने शरीर पर कीचड़ लपेट लिया और अंड बंड बकना शुरू कर दिया। कभी वह गाली बकती, कभी रोती और कभी अपने वस्त्रों की प्रशंसा करती, कभी राजा की प्रशंसा करती उसका गुणगान करती और कभी राजा को गाली देती, उसकी स्थिति प्रमत्त जैसी हो गयी।

दण्डधारियों ने अन्तःपुर में नर्मदा को पहुँचा दिया, पर उन्मत्तावस्था के कारण सभी अन्तःपुर वासी उसके व्यवहार से खिन्न थे। कभी तो वह लोगों की ओर झपटती, जिससे डर कर लोग भाग जाते। कभी किसी को मारती, कभी हँसती और कभी गाली देती।
परिचारकों ने राजा से निवेदन किया कि—
वह सुन्दरी पागल है। वह अन्तःपुर में उपद्रव मचा रही है। कभी वह किसी रानी के ऊपर कीचड़ डालती है, कभी पुष्प तोड़कर उछालती है और कभी अर्ध नग्नावस्था में परिभ्रमण करती है।
राजा ने पागलपन को दूर करने वाले व्यक्तियों को बुलाया। मंत्र, तंत्र और झाड़-फूँक शुरू हुई, पर कोई लाभ नहीं हुआ। उसका पागलपन उत्तरोत्तर बढ़ने लगा। अब उसका अन्तःपुर निवास करना कठिन हो गया। अतः उसे अन्तःपुर से मुक्त कर दिया। नर्मदा सुन्दरी अपने शरीर पर कीचड़ लपेट कर एक खप्पर लिए हुए घर-घर भिक्षा माँगते हुए विचरण करने लगी। अपनी उन्मादावस्था को दिखलाने के लिए कभी वह नाचती, कभी रोती, कभी गाती और कभी हँसती थी। एक दिन जिन देव नामक श्रावक मिला। इस श्रावक से उसने अपने मन की समस्त व्यथा कह सुनाई उसने बतलाया कि शीलव्रत की रक्षा के हेतु पागलपन का स्वांग उसे करना पड़ रहा है। वास्तव में वह बिल्कुल ठीक है। इस संसार के विलासी व्यक्तियों के कारण उसका मन ऊब चुका था और वह श्रमण दीक्षा लेने के लिए उत्सुक थी—
जिन देव वीरदास का मित्र था। उसने नर्मदा को वीरदास के यहाँ सकुशल पहुँचा दिया। वहाँ आकर नर्मदा सोचने लगी—
वासना का पंक व्यक्ति की अन्तरात्मा को दूषित कर देता है, पर जब इस पंक से साधना का पंकज विकसित होता है, तो व्यक्ति अपने उत्थान का मार्ग प्राप्त कर लेता है। जीवन का सत्य साधना में है, वासना में नहीं। विषय कीट अपना तो पतन करता ही है, सम्पर्की व्यक्ति को भी पाप के गर्त में गिरा देता है। वास्तव में कषाय त्याग करने पर ही प्रभुत्व का मद छूटता है, छिपाव या दुराव नहीं रहता, हिंसा और संघर्ष नहीं रहते और पराधीनता से छुटकारा प्राप्त कर स्वातंत्र्य की प्राप्ति हो जाती है। संसार की मृग मरीचिका व्यक्ति को पीड़ित रखती है।

शील आत्मा का धन है, इस धन की रक्षा के लिए देह का भी त्याग किया जा सकता है। शील के रक्षित रहने पर भी गुण रक्षित रहते हैं। शील के प्रभाव से अनेक प्रकार की विभूतियाँ प्राप्त होती रहती है। विद्या, मंत्र, औषधि आदि की सिद्धि शील के कारण होती है। नारी की सबसे बड़ी सम्पत्ति शील है। अतः मैंने अपने इस धन की रक्षा अनेक प्रकार की कठिनाईयों को सहन कर भी की है।

नर्मदा सुन्दरी संसार के विषयों से ऊब चुकी थी। उसे जगत की स्वार्थ परता प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ रही थी। अतः उसने एक दिन आचार्य, महाराज के समक्ष पहुँचकर अपना मंथनुट्ठी केश लुञ्चन किया और 'णमो अरहंताणं' कह कर आर्यिका दीक्षा प्राप्त करने की याचना की।

दीक्षित नर्मदा जनकल्याण और आत्मकल्याण में प्रवृत हो गयी। उसने गांव–गांव जाकर सोयी नारी जाति को जगाया। ज्ञान का अलख जगाकर बहनों को ज्ञानी–ध्यानी बनने के लिए प्रेरित किया।

उसने बतलाना आरम्भ किया कि— नारी भी पुरुष के समान अविवाहित रहकर लोक सेवा सकती है। जीवन शोधन में वह किसी से पीछे नहीं रह सकती। पुरुष समाज स्वयं ही नारी के सतीत्व का अपहरण करता है। वह स्वयं पाप या दुराचार कर नारी के ऊपर पाप आरोपित कर अपने को निर्दोष बतलाता है। अतएव नारियों को अपने ऊपर स्वयं विश्वास करना होगा। जब हम बाहर की प्रवृत्तियों से हटकर अपने भीतर का दर्शन करने लगते हैं, तो हमें अपार आनन्द प्राप्त होता है। बहनों को अपनी दृष्टि में परिवर्तन करना होगा, बहिर्मुखी होने के स्थान में उसे अन्तर्मुखी बनाना होगा। मन की पवित्रता और ज्ञान का आलोक ही जीवन का चरम ध्येय होना चाहिए। जब तक प्रेय को भस्म बनाकर उसका व्यवहार नहीं किया जायेगा। तब तक श्रेय की उपलब्धि नहीं हो सकती। प्रेय का होलीदाह ही श्रेय का मंगल प्रभात है। प्रेय की भभूत मर्दन से ही अन्तर्मुखी प्रवृत्ति का विकास होता है।

जैन धर्म के प्रसिद्ध महापुरुषों पर आधारित रंगीन सचित्र जैन चित्र कथा

जैन धर्म के प्रसिद्ध चार अनुयोगों में से प्रथमानुयोग के अनुसार जैनाचार्यों के द्वारा रचित ग्रन्थ जिनमें तीर्थंकरों, चक्रवर्ति, नारायण, प्रतिनारायण, बलदेव, कामदेव, तीर्थक्षेत्रों, पंचपरमेष्ठी तथा विशिष्ट महापुरुषों के जीवन वृत्त को सरल सुबोध शैली में प्रस्तुत कर जैन संस्कृति, इतिहास तथा आचार-विचार से सीधा सम्पर्क बनाने का एक सरलतम् सहज साधन **जैन चित्र कथा** जो मनोरंजन के साथ-साथ ज्ञान वर्द्धक संस्कार शोधक, रोचक सचित्र कहानियां आप पढ़ें तथा अपने बच्चों को पढ़ावें **आठ वर्ष से अस्सी** तक के बालकों के लिये एक आध्यात्मिक टोनिक **जैन चित्र कथा**

सम्पर्क सूत्र :

अष्टापद तीर्थ जैन मन्दिर

विलासपुर चौक,
दिल्ली-जयपुर N.H. 8,
गुड़गाँव, हरियाणा
फोन : 09466776611
09312837240

द्वारा
आचार्य धर्मश्रुत ग्रन्थमाला
एवं
मानव शान्ति प्रतिष्ठान

ब्र. धर्मचन्द शास्त्री
प्रतिष्ठाचार्य

अष्टापद तीर्थ जैन मन्दिर

विश्व की प्रथम विशाल 27 फीट उत्तंग पद्मासन कमलासन युक्त युग प्रर्वतक भगवान आदिनाथ, भरत एवं बाहुबली के दर्शन कर पुण्य लाभ प्राप्त करें।

मानव शान्ति प्रतिष्ठान

विलासपुर चौक, निकट पुराना टोल, दिल्ली-जयपुर राष्ट्रीय राजमार्ग 8,
गुड़गांव (हरियाणा) फोन नं. : 09466776611, 09312837240